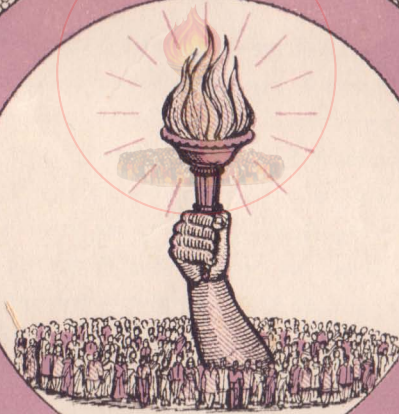




अपनी प्रतिष्ठा-अपने हाथ

सम्पादन विभाग
प्रो. व. व. शर्मा, बीरहटार

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org



श्रीराम शर्मा आचार्य



: BOOK MADE AVAILABLE FOR DIGITIZATION BY :

BRAHMVARCHAS SHODH SANSTHAN
SHANTIKUNJ, HARIDWAR, INDIA

: OUR MAIN CENTERS :

Shantikunj, Haridwar,
Uttaranchal, India – 249411
Phone no : 91-1334- 260602,
Website : www.awgp.org
E-mail : shantikunj@awgp.org

Gayatri Tapobhumi,
Mathura, U.P., India – 281003
Phone no : 91-0565-2530128,
Website : www.awgp.org
E-mail : yugnirman@awgp.org



: BOOK DIGITIZED BY :

Vicharkranti Pustakalay, Thana-Faliya, Dindoligam, Surat-394210, Gujarat, India
E-mail: vicharkranti.awgp@gmail.com | Website : www.vicharkrantibooks.org



अपनी प्रतिष्ठा अपने हाथ



ईमानदारी बनाम आत्म सम्मान

“तुम कुत्ते हो” ऐसा कड़ुआ वचन यदि कोई कहे तो जिसे यह कहा गया है वह लड़ने-मरने को तैयार हो जायगा। इसे अपनी बेइज्जती समझेगा और बदला लेने पर तुल जायगा। किसी को ‘कुत्ता’ कहना भारतीय विचार-धारा के अनुसार एक गाली है जिसे कोई स्वभिमानी सहन नहीं कर सकता।

यह विचारणीय है कि एक सीधे-साधे निर्दोष जानवर की उपमा दे देने से इतनी चिढ़ क्यों उत्पन्न होती है? कुत्ते में वैसे कोई बुराई नहीं मालूम होती। जो रुखा-सूखा मिल जाता है उसी में सन्तोष कर लेता है, रात भर जागरण कड़ी मेहनत से चौकीदारी करता है, किसी को सताता नहीं, मालिक से प्रेम करता है, इतने गुण होने के कारण ही लोग उसे खुशी के साथ पालते हैं यदि अवगुण अधिक होते तो उसे कोई पास भी खड़ा न होने देता। शृगाल भेड़िया आदि भी कुत्ते की जाति के और रंग, रूप के हैं पर वे मनुष्य के लिए लाभदायक नहीं हैं इसलिये कोई उन्हें पालने का साहस नहीं करता। जिनमें कुत्ता निस्सन्देह कई उत्तम गुण रखता है तभी उसे पाला जाता है किन्तु कोई खास त्रुटि उसके अन्दर मालूम पड़ती है जिसके कारण कुत्ते से अपनी उपमा दिये जाने पर मनुष्य तिलमिला उठता है। घोड़ा, हाथी, शेर, गाय, हिरन खरगोश आदि भी जानवर हैं और उसी पशु जाति के हैं जिसका कि कुत्ता है। घोड़ा, हाथी, शेर, हिरन, खरगोश की उपमा दी जाय तो वह इसे मनोरञ्जन समझकर हँसी में टाल देगा परन्तु यदि ‘कुत्ता’ कहा जाय तो आग-बबूला हो जायगा।



जिस दोष के कारण कुत्ते को इतना नीच समझा जाता है कि उसकी तुलना अपने से होना गाली जैसा प्रतीत होता है वह दोष है—आत्म-सम्मान का अभाव।” कुत्ता रोटी के टुकड़े के लिए दुम हिलाता है, मालिक के पैर चाटता है, हजार बार अपमानित होने पर भी कुछ नहीं कहता। मनुष्य की अन्तरात्मा कहती है कि बेइज्जती सहन करना सबसे बड़ा अपह्न आघात है उसे कुत्ता सहन कर सकता है, मनुष्य नहीं। कहते हैं कि तलवार का घाव भर जाता है पर अमान का घाव नहीं भरता। अपमानित होने की अपेक्षा लोग प्राण दे देना अच्छा समझते हैं। ठोकर खाकर साँप जैसा नाचीज कीड़ा बदला लेता है, चींटी जैसा छोटा जीव काट खाता है, मनुष्य भी स्वामिमान की रक्षा के लिये सर्वस्व की बाजी लगा देता है। अपमानित करने वाले को नीचा दिखाने के लिए विवाद करता है, मुकदमा लड़ता है, लाठी चलाता है, खून बहाता है और जो कुछ उससे हो सकता है सब कुछ करता है। मानव प्रकृति सब कुछ सहन कर सकती है परन्तु अपमान का, बेइज्जती का घूँट गले से नीचे नहीं उतार सकती। मनुष्य इज्जतदार प्राणी है बेइज्जती होना उसके अध्यात्मिक अधिकार पर कुठाराघात होना है। जिस रुपये पैसे घर जमीन जायदाद पर अपना अधिकार है उसे छिनाये जाने पर मनुष्य शक्ति भर विरोध करता है। आत्मा का मूलभूत अधिकार सम्मान है मछली स्वच्छ पानी में जीना चाहती है और आत्मा विशुद्ध सम्मान में रहना पसन्द करती है। धूँएँ में हमारा दम घुटता है और हम उस स्थान में रहना पसन्द नहीं करते। हमारा अन्तःकरण अपमानजनक स्थित को सहन करने के लिए कदापि प्रस्तुत नहीं होता। जिसने अपने अन्तःकरण को कुचल-कुचल कर मृत प्रायः बना डाला है, नित्य पददलित करके अन्धा, गूँगा, बहरा बना लिया है उनकी बात हम नहीं कहते। शेष वे लोग जिनमें जरा-सा भी मनुष्यत्व बाकी है, बेइज्जती का जीवन पसन्द न करेंगे और अप्रिय परिस्थिति का जितना विरोध कर सकेंगे करेंगे बच सकने का जितना प्रयत्न कर सकेंगे, करेंगे। यही कारण है कि मनुष्य कुत्ते से अपनी तुलना होना पसन्द नहीं करता। किसी में चाहे कितने ही गुण क्यों न हों परन्तु यदि वह अपने सम्मान की रक्षा नहीं करता तो वह घृणित, नीच, पतित और अधम समझा जायगा। इस

सचाई को मनुष्य मां के गर्भ से सीख कर आता है। गुरु के उपदेश शास्त्र के आदेश को सुने बिना भी हर एक मनुष्य आत्म गौरव के सत्य सिद्धान्त को भली प्रकार जानता है। मनुष्यता के अत्यन्त आवश्यक एवं सर्वोपरि गुण को जब वह कुत्ते में नहीं देखता तो उसकी तुलना कराके अपनी बेइज्जती नहीं कराना चाहता। 'कुत्ता' कहने को गाली समझने का यही कारण है।

गौरव शालिनी आत्मा निस्सन्देह सम्मान की पात्र है। सम्माननीय वस्तु को उसके अनुरूप स्थान देना उचित है। भोजन को पवित्र स्थान पर रखते हैं, पूजा की सामग्री को रखने के लिये शुद्ध स्थान चुना जाता है, गुरुजनों को उच्च आसन देते हैं। कारण यह है कि आदरणीय, उत्तम और प्रतिष्ठित वस्तु को उच्च स्थिति में रखने की आवश्यकता सर्व विदित है। मानव शरीर में प्रतिष्ठित गौरव शालिनी आत्मा के सम्माननीय परिस्थिति में रखने की आवश्यकता से भी हमें परिचित होना चाहिये। जीवन धारण करने की शान इसमें है कि सम्मान के साथ जिया जाय, लोगों की दृष्टि में श्रद्धा और आदर का पात्र बनकर रहा जाय।

जीवन को सम्माननीय स्थिति में रखना, सर्वोपरि सुखद अवस्था है। क्योंकि इसमें सुखादु और पौष्टिक अध्यात्मिक तत्व प्रचुर मात्रा में प्राप्त होते हैं। सात्विक, पृष्ठक आहार ठीक रीति से यदि प्राप्त होता जाय तो शरीर में बलवृद्धि होती है स्फूर्ति आती है, अङ्ग सुदृढ़ होते हैं, जीवनी शक्ति बढ़ती है और तेज बढ़ने लगता है। इसी प्रकार यदि आत्म-सम्मान का सात्विक पोषण पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होता रहे तो मार्मिक स्वास्थ्य की उन्नति होती है बुद्धि बढ़ती है, सद्गुण विकसित होते हैं। कार्य शक्ति उन्नति करती है, और बड़ी-बड़ी दुर्गम बाधाओं को पार करता हुआ वह सफलता के उन्नत शिखर पर तीव्र गति से बढ़ता जाता है।

आपने देखा होगा कि जलवायु में ऐसे तत्व होते हैं जिनका स्वास्थ्य पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है। किन्हीं स्थानों की जलवायु ऐसी स्वास्थ्यकर होती है कि बीमार आदमी अच्छे हो जाते हैं और अच्छों की तन्दुरुस्ती बढ़ती है। किन्हीं स्थानों की जलवायु में ऐसे तत्व होते हैं कि वहाँ रहने से जीवनी



शक्ति घटती है और बीमार पड़ जाने की अशङ्का बनी रहनी है । समुद्र तटों पर तथा पहाड़ों पर कुछ समय के लिये बड़े लोग वायु सेवनार्थ जाया करते हैं ताकि उनका स्वास्थ्य सुधर जाय । जहाँ नमी और सील रहती है वहाँ की तराइयों में अक्सर ज्वर जूड़ी और कै दस्त की बीमारियाँ फैला करती हैं । एक पंजाबी और एक बङ्गाली को पास-पास खड़ा करके यह स्पष्ट रूप से जाना जा सकता है कि जलवायु के अन्तर का स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है ।

मोटी दृष्टि से देखा जाय तो स्वास्थ्यप्रद और हानिकारक स्थानों के पानी का रंग रूप तथा स्वाद एक ही तरह का मालूम पड़ता है इसी प्रकार सांस लेते समय दोनों स्थानों की हवा भी एक ही तरह की जान पड़ती है, मामूली परीक्षा करने वाला उस अन्तर को नहीं जान सकता । जवान से चखकर पानी का फर्क मालूम नहीं किया जा सकता और न नाक से सूँघकर हवा का अन्तर प्रकट होता है । साधारण बुद्धि उस फर्क को जानने में प्रायः असमर्थ ही रहती है तो भी वह अन्तर अस्वीकार नहीं किया जा सकता । विवेक पूर्वक अन्य साधनों से परीक्षा करने पर वह अन्तर समझ में आ जाता है और अन्ततः यह मान लेना पड़ता है कि उन स्थानों की जलवायु में कुछ ऐसे तत्व अदृश्य रूप से मिले हुए हैं जो तन्दुरुस्ती पर बड़ा भारी प्रभाव डालते हैं । अदृश्य और इन्द्री अगम्य होने पर भी उन तत्वों का होना इतना ही सत्य है जितना कि दिखाई पड़ने वाले प्रकट पदार्थों का होना ।

आत्म सम्मान और आत्म तिरस्कार भी ऐसे ही दो परस्पर विरोधी जलवायु हैं जिनका मानसिक स्वास्थ्य पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है । लोगों के हृदय में से जब किसी के लिये श्रद्धा आदर भावना, मित्र दृष्टि, मङ्गलकामना आशीर्वाणी उठती है तो वह उच्चकोटि के सात्विक एवम् आनन्दमय तत्वों से भर पूर होती है । यह सद्भावनाएं बिजली की लहरों की तरह आकाश के ईथर तत्त्व में प्रवाहित होती हुई उसी आदमी के पास जा पहुँचती हैं जिसके लिये उनका जन्म हुआ था । बन्दूक की गोली निशाने पर लगती है, छोड़ा हुआ तीर अपने लक्ष्य पर पहुँचता है । गोली और तीर तो निशान चूक सकते हैं परन्तु श्रम और वरदान की, तिरस्कार और सम्मान की भलाई और बुराई की

भावनायें कभी नहीं चूकतीं जिसके लिये वे उत्पन्न हुई हैं इसके समुचित निवास गति से जा पहुँचती हैं। यही वह आहार है जिसके आधार पर आत्मिक स्वास्थ्य घटता-बढ़ता है। किसान खेत में बीज बोता है समय पर फसल कटती है और उसी अन्न से वह अपना पेट भरता है। गेहूँ बोया है गेहूँ खाता है मक्का बोई है तो मक्का पर निर्वाह करता है। मनुष्य संसार रूपी खेत में कर्तव्य कर्मों का बीज बोता है और उस व्यवहार के कारण जो श्राप वरदान प्राप्त होने हैं उसी आहार से आत्मिक भूख बुझाता है यदि दूसरों के साथ बुराई की गई है तो वह मन ही मन तुम्हारे प्रति घृणा उगलेगा श्राप देगा दुःखी होगा और तिरस्कार के भाव उत्पन्न करेगा। यह घृणा, श्राप, दुःख, तिरस्कार मिलकर जब सामने आवेंगे और अपनी कमाई हुई इस फसल पर ही आत्मिक भूख बुझाने को विवश होना पड़ेगा तब यह तामसी अखाद्य और विषैला अदृश्य आहार वैसा प्रभाव करेगा जैसे कि सीलदार तराईयों का जलवायु हानिकारक असर करता है। घुएँ से भरे हुए स्थान पर सुख पूर्वक नहीं रहा जा सकता इस प्रकार यदि चारों ओर से उड़-उड़कर श्राप और तिरस्कार की भावनाएँ आती रहें तो उस अनिष्टकर वातावरण में साँस लेते-लेते एक दिन आत्मिक स्वास्थ्य नष्ट होकर मानसिक रोगों की भरमार हो जायगी।

दूसरों के मन में यदि आपके लिये आदर है, सम्मान है, सद्भाव है तो वे ऐसी शीलता, शान्तिदायक, आनन्दमयी विद्युत-धारा अदृश्य रूप से प्रवाहित करेंगे जो आप तक पहुँचते २ ऐसी स्वास्थ्यप्रद बन जायेंगी जैसी समुद्रतट एवम् पर्वतीय प्रदेशों की जलवायु। जिसने किसी से अनुचित व्यवहार नहीं किया, ठगा नहीं अनिष्ट नहीं किया, धोखा नहीं दिया वह कभी दुःखी उदास और असन्तुष्ट दिखाई न देगा। क्योंकि उसका अन्तःकरण जानता है कि मैंने अखाद्य नहीं खाया है, अकर्म नहीं किया है, अधर्म नहीं फैलाया है, अनर्थ नहीं बढ़ाया है। मन से, कर्म से, वचन से जिसने दूसरों का हित चाहा है स्वार्थ की अपेक्षा परमार्थ को प्रधानता दी है। नम्रता, उदारता, प्रेम, भलमनसाहत ईमानदारी का व्यवहार करके सम्बन्धित लोगों को सन्तुष्ट रखा है तो वह सच्चा सम्मान का पात्र है। अपनी दृष्टि में स्वयं आप सम्माननीय है और



दूसरे लोग भी उसे वैसे ही समझेंगे जैसा कि वह वास्तव में है। कुछ समय के लिए भ्रम में रह सकते हैं पर अन्त में सच्चाई प्रकट होती ही है भला आदमी सदैव भला रहेगा। उसे अपने आप से और दूसरों से सच्चा सम्मान प्राप्त होगा, वह सम्मानपूर्ण वातावरण उसके मानसिक स्वास्थ्य की पुष्टि करेगा। प्रसन्नता सन्तोष, शान्ति, आनन्द से उसका चित्त उमंगें लेता रहेगा। यह जीवन ही उसके लिए स्वर्ग होगा, भले ही वह धन-दौलत की दृष्टि से गरीब बना रहे।

ईमानदार और भले मानस बनें--

इस युग में चापलूसी और कायरता बढ़ गई है। खुशामदी लोग अपना उल्लू सीधा करने के लिये उनकी प्रशंसा के पुल बांध देते हैं जिससे मतलब निकालना होता है। कायर लोग डरते हैं, खरी बात मुँह से मने कहने में उनकी नानी मरती है। प्रभावशाली, दबंग अमीर या बलवान के सामने उसकी खरी आलोचना करते हुए कायरों का दिल धड़कने लगता है, पर कौनसे लगते हैं इसलिए वे अपनी खीर समझते हैं कि चुप रहें और समय की टाल दें। तीसरे लोग स्वार्थी दर्जे के होते हैं द उनके ऊपर कुछ बीते भले ही चें में करें पर यदि उनके पड़ोसी, मित्र या भाई पर कुछ अम्याय होता हो तो 'कौन झगड़े में पड़े' या 'हमें अपने मतलब से मतलब' कहकर चुप हो रहते हैं। इस जमाने में उपयुक्त तीन तरह के लोगों की अधिकता है। जो बुलाई का सेहरा अपने सिर पर ओढ़ने को तैयार हों, झगड़े से न डरते हों, सताए हुए लोगों का निस्वार्थ भाव से पक्ष लेते हों, अनुचित काम करने वाले की खरी समालोचना करने का जिनमें साहस हो, ऐसे वीर पुरुषों का प्रायः अभाव ही हो गया। चापलूसी कायरता और खुदगर्जों की अतिशय वृद्धि हो जाने के कारण अनुचित काम करने वालों की समालोचना या विरोध का बहुत कम सामना करना पड़ता है। यदि एक आदमी ने कुछ कहा सुना भी तो अम्याय करमे वाले के दस साथी उठ खड़े होते हैं और उसका मुँह बन्द कर देते हैं।

यह ठीक है कि अनुचित काम करने वाले बेईमान लोग अपना काम



मजे में चलाते रहते हैं उन्हें विरोध का बहुत थोड़ा सामना करना पड़ता है और पैसे के बल पर बहुत से सहायक मिल जाते हैं। इन सब बातों को रोज आखों के सामने हम देखते हैं। तो भी यह स्पष्ट है कि वह बेईमान आदमी किसी की दृष्टि में इज्जतदार नहीं बन सकता। किसी के दिल में उसके लिए श्रद्धा या सम्मान का एक कण भी नहीं होता। चापलूस अपना मतलब निकालने के लिए तारोफ करता है, कायर डर के मारे कुछ नहीं कहता, खुदगर्ज को तो अन्धा अपाहिज समझना चाहिए। उसे अपने सिवाय और कुछ दिखाई नहीं पड़ता। कसाई के कुत्ते रोटी के लिए पक्ष लेते हैं चोर-चोर मौसेरे भाई, इसलिए अन्यायी की हिमायत लेते हैं कि कल यह मेरी पक्ष लेकर बदला चुका देगा। यह सब क्रम चलता है परन्तु इनका हृदय टटोला जाय तो सबके मन में घृणा विराज रही होगी। मतलब कौं गुटबन्दी भले ही बनी रहे पर भीतर दिल फटे रहते हैं। हर आदमी विवेक और विचार रखता है ईश्वर ने सबको बुद्धि दी है सब जानते हैं कि यह अनर्थ हो रहा है। अनर्थ-समर्थक का भी अन्तःकरण उससे घृणा करता है। बुरे काम को कोई स्वार्थवश करना भले रहे और जवान से उसका समर्थन भले करता रहे पर उसका हृदय उसे बुरा ही समझेगा और बुरे कर्म से घृणा करने की जो अध्यात्मिक प्रवृत्ति है वह अपना काम करती रहेगी, यही कारण है कि बदमाशों के गिरोह अधिक दिन नहीं चलते उनमें भीतरी फूट पड़ जाती है और वह गुट छिन्न—भिन्न हो जाता है। उद्देश्य, सच्चाई और कर्तव्य के लिए काम करने वाले साथी एक दूसरे के लिये प्राण निछावर कर सकते हैं अपने सर्वस्व की बाजी लगा सकते हैं परन्तु बदमाशों का गुट जरा से आघात से तितर-बितर हो जाता है।

अनुचित आचरण करने वाले के सङ्गी, साथी, कुटुम्बी, स्त्री, पुत्र तक मन में उससे घृणा करते हैं। परिचित लोग तो और भी अधिक घृणा करते हैं। जिसको सताया गया है, ठगा गया है वह तो अत्यन्त तिरस्कार के भाव उगलेगा। इस तरह अदृश्य लोक में चारों ओर से तिरस्कार अनादर और दुर्भाव उसके ऊपर उड़-उड़कर जमा होते जाते हैं। जैसे रेतीली प्रदेश की आँधी में पड़कर वस्त्र रहित पथिक घबराता है। आंख, नाक, मुँह में धूल के अम्बार



प्रबल वेग से धँसकर बेचैन करते हैं वैसे ही चारों ओर से उड़-उड़कर आने वाली दुर्भावनायें उसे व्यथित करती हैं और अर्ध विक्षिप्त की तरह वह परेशानी में डूबता उतरता है। बेईमानी गुप्त रूप से की जाय तो भी अपनी खुद की आत्मा धिक्कारने को मौजूद है। करने वाले का नाम भले ही छिपा रहे पर बेईमानी का कार्य अधिक समय तक छिपा नहीं सकता। सताया हुआ व्यक्ति का दिमाग भले ही यह न जान पावे कि किसने मेरे साथ अनर्थ किया है पर उसके मन में से जो हाय, घृणा, श्रापवाणी निकलती है वह लक्ष्य बेधी बाण की तरह सीधी उसी के ऊपर टूट पड़ती है जिसने प्रकट रूप से या गुप्त रूप से वह कुकृत्य किया था। तात्पर्य यह है कि कितनी भी होशियारी से, चालाकी से सफाई से, गुप्त रूप से बेईमानी की जाय वह करने वाले के लिए अदृश्य रूप से घातक और दुःखदायी परिणाम लाती है। अधर्मी मनुष्य चाहे वह कितना ही चतुर क्यों न हो आत्म-सम्मान का स्वर्गीय, तृप्तिदायक आहार प्राप्त नहीं कर सकता। वह सोना जमा कर सकता है पर जीवन फल प्राप्त नहीं कर सकता। बेईमानी से जमा की हुई सम्पत्ति ऐसी है जैसी मृग के लिए कस्तूरी। माना कि कस्तूरी बहुमूल्य है पर जिस दिन से मृग के शरीर में पड़ती है उसी दिन से उस गरीब का सोना छूट जाता है, विश्राम बन्द हो जाता है। भूख प्यास की चिन्ता छोड़कर हर बड़ी अनिश्चित गति से चारों ओर भागता फिरता है। यह कस्तूरी मृग के किसी काम नहीं आती, उल्टी शिकारियों द्वारा बध करा देने की कारण बन जाती है। वह सम्पदा किस काम को जो कस्तूरी की तरह दुःखदायी हो।

आत्म सम्मान को प्राप्त करने और उसे सुरक्षित रखने का एक ही मार्ग है वह यह है कि “इमानवारी” को जीवन की सर्वोपरि नीति बना ली जाय। आप जो भी काम करें उसमें सचाई को पर्याप्त मात्रा होनी चाहिए। लोगों को जैसा विश्वास दिलाते हैं उस विश्वास की रक्षा कीजिये। विश्वास घात, दगाबाजी, वचन पलटना, कुछ कहना और कुछ करना, मानवता का सबसे बड़ा पातक है। आजकल वचन पलटना एक फैशन सा बनता जा रहा है, इसे हल्के दर्जे का पाप समझा जाता है पर वस्तुतः अपने वचन का पालन

अपनी प्रतिष्ठा •]

कलित भूषण, औरत

न करना, जो विश्वास दिलाया जाता है उसे पूरा न करना, बहुत ही भयानक आत्मघाती, सामाजिक पाप है। धर्म आचरण की अ, आ, इ, ई, वचन पालन में आरम्भ होती है। यह प्रथम सीढ़ी है जिस पर पैर रखकर ही कोई मनुष्य धर्म की ओर, आध्यात्मिकता की ओर, उच्चत्व की ओर बढ़ सकता है।

अपने बारे में जवान से कहकर या बिना जवान से कहे किसी अन्य प्रकार जो कुछ दूसरों को विश्वास दिलाते हैं, शक्ति भर उसे पूरा करने का प्रयत्न करना, यह मनुष्यता का प्रथम लक्षण है। जिसमें यह गुण नहीं वह सच्चे अर्थों में मनुष्य नहीं कहा जा सकता और न उसे वह सम्मान प्राप्त हो सकता है जो कि एक मनुष्य को होना चाहिए। आप जो भी कारोबार करें उसमें ईमानदारी का अधिक से अधिक अंश रखें, इससे अपने सम्मान की वृद्धि होगी और कारोबार खूब चलेगा। उन नासमझ लोगों को क्या कहा जाय जो मुँह फाड़कर यह कह दिया करते हैं कि “व्यापार में बेईमानी के बिना काम नहीं चलता, ईमानदारी से रहने में गुजारा नहीं हो सकता।” असल में ऐसा कहने वाले ओछी बुद्धि के, नासमझ और विवेक बुद्धि से सर्वथा रहित होते हैं। भला बेईमानी भी व्यापार का कोई तरीका है? यह तो वह कुकर्म है जिसके लिए दफा ४२० के अनुसार सात साल तक के लिए जेलखाने में धक्की पीसनी पड़ती है, इतनी बदनामी मिलती है जिसके कारण कोई भला आदमी उसे अपने पास नहीं बैठने देता, जो कारोबार ऐसी ओछी नीति के ऊपर खड़ा हुआ है वह बालू के महल की तरह बहुत शीघ्र ढह जाता है।

जो समझते हैं कि हमने बेईमानी से पैसा कमाया है, वे गलत समझते हैं। असल में उन्होंने ईमानदारी की ओट लेकर ही अनुचित लाभ उठाया होता है। कोई व्यक्ति साफ-साफ यह घोषणा करदे कि “मैं बेईमान हूँ और घोखेबाजी का कारोबार करता हूँ” तब फिर अपने व्यापार में लाभ करके दिखावे तो यह समझा जा सकता है कि—हाँ बेईमानी भी कोई लाभदायक नीति है। यदि ईमानदारी की आड़ लेकर, बारबार सचाई की दुहाई देकर अनुचित रूप से काम चला लिया तो वह ईमानदारी को ही निचोड़ लेना हुआ। यह काम



तभी तक चलता रह सकता है जब तक कि पर्दाफाश नहीं होता, जिस दिन यह प्रकट हो जायगा कि भलमनसाहत की आड़ में बदमाशी हो रही है उस दिन उस कालनेमी माया का अन्त ही समझना चाहिए।

कुछ बताकर कुछ चीज देना यह एक पाप है जिससे सारी प्रतिष्ठा धूल में मिल जाती है। दूध में पानो, घी में बेजीटेबिल, अनाज में कङ्कड़, आटे में मिट्टी मिलाकर देना आजकल खूब चलता है, असली कहकर नकली और खराब चीजें बेची जाती हैं। खाद्य-पदार्थों और औषधियों तक की प्रामाणिकता नष्ट हो गई है। मनमाने दाम वसूल करना और नकली चीज देना यह बहुत बड़ी धोखाधड़ी है। अच्छी चीज को ऊँचे दाम पर बेचना चाहिए, यह अपडर झूठा है कि अच्छी चीज मँहगे दाम पर न बिकेगी। यदि यह प्रमाणित किया जा सके कि वस्तु असली है तो ग्राहक उसको अधिक पैसा देकर भी खरीद सकता है। विदेशों में जिन व्यापारियों ने व्यापार का असली मर्म समझा है उन्होंने पूरा तोलने, एक दाम रखने और जो वस्तु जैसी है उसे वैसी ही बताने की अपनी नीति बनाई है। और अपने कारोबार को सुविस्तृत करके पर्याप्त लाभ उठाया है। सदियों को पराधीनता ने हमारे चरित्र बल को नष्ट कर डाला है तदनुसार हमारे कारोबार झूठे, नकली और ठगो से भरे हुए, होने लगे हैं। धोखेबाजी से न तो बड़े पैमाने पर लाभ ही उठाया जा सकता और न प्रतिष्ठा ही प्राप्त की जा सकती है। व्यापार में धोखेबाजी की नीति बहुत ही बुरी नीति है। इस क्षेत्र के कार्यों और कमीने स्वभाव के लोगों के घुस पड़ने के कारण भारतीय उद्योग-धन्धे, व्यापार नष्ट हो गये। इस देश में प्रचुर परिमाण में शहद उत्पन्न होता है, पर जिसे प्रामाणिक शहद की जरूरत है वह यूरोप और अमेरिका से आया हुआ शहद कैमिस्ट की दुकान से जाकर खरीदेगा। घी इस देश में पर्याप्त मात्रा में उत्पन्न होता है पर अविश्वास के कारण लोग रूखा-सूखा खाना या बेजीटेबिल प्रयोग करना पसन्द करते हैं। हमारे व्यापारिक चरित्र का यह कैसा शर्मनाक पतन है।

यही बात श्रमजीवी क्षेत्र में चल रही है। दैनिक वेतन ठहराकर मजदूर बुलाइये आठ घण्टे में पाँच घण्टे के बराबर काम करेंगे। ठेके पर काम

दि दीजिए तो चार दिन का काम एक दिन में बड़ी जल्दीबाजी से करके रख देंगे। अपने लिए अनुचित लाभ कमाने की खातिर दूसरे का काम बिगाड़ कर रख देने की उन्हें जरा भी परवाह न होगी। आधे मन से, आधे परिश्रम से, आधी जिम्मेदारी से, काम करने वाले श्रमजीवी अधिक दिखाई पड़ते हैं। ऐसे लोगों के लिए काम कराने वालों के मन में भला क्या आदर हो सकता है? इन्हें काहिल, कमजोर, निकम्मा और हरामी समझा जाता है। लेने को तो अपनी मजदूरी के पैसे ले ही जाते हैं पर काम कराने वालों के आदर और सहयोग से वञ्चित रह जाते हैं। मानव प्राणी में दैवी अंश प्रचुर मात्रा में भरा हुआ है, यदि कमजोर आर्थिक स्थिति वाले श्रमजीवी अपनी सचाई के द्वारा काम कराने वालों के मन में अपने लिए थोड़ा सा स्थान प्राप्त कर लें तो उनका प्रेम और सहयोग भी प्राप्त कर सकते हैं। उस प्रेम तथा सहयोग के आधार पर अधिक लाभदायक स्थिति के अवसर भी प्राप्त हो ही सकते हैं। हमें ऐसे अनेक उदाहरण मालूम हैं जिनमें अपनी ईमानदारी से मजदूर ने काम कराने वाले के दिल में स्थान प्राप्त किया और फिर उनके सहयोग से बहुत उन्नत अवस्था को पहुँच गये। अदूरदर्शी मजदूर इन बातों को नहीं समझता, वह हरामखोरी से मेहनत बचाकर, चोरी से जैसा बचाकर, गैर जिम्मेदारी से बुद्धि का खर्च बचाकर कुछ आसानी और आराम अनुभव करता है पर वह नहीं जानता कि इसके बदले में कितनी हानि कर रहा है।

धर्म प्रचारक, उपदेशक, ब्राह्मण, लेखक, कवि, नेता, साधु, सन्त, वकील डाक्टर, शासक आदि बुद्धि जीवी श्रेणी के लोगों का उत्तरदायित्व सबसे महान् है। मस्तिष्क की शक्ति से मनुष्य सुव्यवस्थित रूप से चलता है और बुद्धि जीवियों की प्रेरणा से समाज की व्यवस्था बनती है पागल और विक्षिप्त मनुष्य का जीवन क्रम बेसिलसिले हो जाता है इसी प्रकार जिस देश के बुद्धि जीवी लोग अपनी बुद्धि का प्रयोग ईमानदारी के साथ करता छोड़ देते हैं वह देश जाति सब प्रकार दीन-हीन और नष्ट-भ्रष्ट हो जाती है। यूरोप, अमेरिका आदि देशों के निवासियों की व्यक्तिगत विशेषताये ऐसी नहीं हैं कि वे इतने ऐश, आराम भोगते। उन देशों के बुद्धि जीवी लोगों ने अपने मस्तिष्कों का उपयोग



अपने निजी स्वार्थों तक ही सीमित न रखा बल्कि उसकी शक्ति से जो काम हो सकते थे उनका लाभ अपने देशवासियों को उदारता पूर्वक बाँट दिया। मुगल सम्राट की लड़की की चिकित्सा कर देने के उपरान्त अंग्रेज डाक्टर ने यह इनाम माँगा कि मेरे देश से आने वाले माल पर शुद्धी न ली जाय। वह चाहता तो अपने निज के लिए धन-ढोलत माँग कर स्वयं मालदार बन सकता था पर उसने ऐसा नहीं किया। वैज्ञानिकों ने जीवन भर खोज करके बड़े-बड़े अन्वेषण किये हैं, आविष्कारों को प्रकट किया है, महत्वपूर्ण यन्त्र बनाये हैं, यदि वे लोग चाहते तो उन खोजों के आधार पर खुद मालामाल बन सकते थे पर क्या उन्होंने ऐसा किया? उन लोगों ने अपने सम्पूर्ण बुद्धि-कौशल का लाभ अपने देशवासियों को उठाने दिया तदनुसार वे देश लक्ष्मी के, आरोग्य के, विद्या के, ऐश आराम के भंडार बने हुए हैं, जल, धल और आकाश के एक बड़े भाग पर शासन कर रहे हैं।

बुद्धि तत्त्व दैवी विभूतियों में एक उच्च कोटि का वरदान है। इसका उपयोग अधिक से अधिक ईमानदारी से होना चाहिए। श्रम और व्यापार के दुरुपयोग से जो हानि होती है वह सीमित है क्योंकि उनका दायरा छोटा और शक्ति स्वल्प है। परन्तु बुद्धि तो गैस या बारूद की तरह है। सदुपयोग से बलवान शत्रु को आसानी से इसके द्वारा मार भगाया जा सकता है और यदि दुरुपयोग किया जाय तो अपना सर्वनाश होने में भी कुछ देर नहीं लगेगी। नादानी से गैस या बारूद के गोदामों को भड़का दिया जाय तो क्षणभर में विस्फोट उपस्थित हो जायगा। मस्तिष्क से निकलने वाली बिजली बहुत ही सावधानी और सतर्कता से बरती जानी चाहिए अन्यथा असंख्य जनसमूह के भाग्य पर उसका घातक प्रभाव हो सकता है। जो ब्राह्मण आत्म-विश्वास की जगह अन्धविश्वास फैलाते हैं, जो वकील न्याय वृद्धि के स्थान पर झूठी मुकदमे बाजी खड़ी कराते हैं, जो डाक्टर प्राकृतिक नियमों पर चलने का उपदेश न देकर दवाओं की गुलामी सिखाते हैं, जो लेखक विकारों को भड़काने वाली निष्कृष्ट रचनायें रचते हैं, जो कवि मातृ जाति को अपमानित करने वाले निर्लज्ज

गीत गाते हैं, जो प्रचारक, कलहकारी प्रचार करते हैं जो नेता खन्यायियों को उल्लू बनाते हैं, जो साधु-सन्त योग का सच्चा धर्म प्रकट करने की अपेक्षा अपने को और दूसरों को भ्रम में डालते हैं, जो शासक प्रजा की उन्नति, सुरक्षा करने के स्थान पर लूट-खसोट पर उतर आते हैं, जो पथ प्रदर्शक अनजानों को गुमाराह करते हैं ये अपने वृद्धि व्यवसाय में भयङ्कर बेईमानी के कारण कुछ समय के लिए विलासिता के साधन इकट्ठे कर सकते हैं पर जनता जना-दंडन के साथ वे ऐसा अपराध करते हैं जिसकी तुलना और किसी पातक से नहीं हो सकती। बुद्धि का दुरुपयोग करके लोगों को उलटे मार्ग पर भटका देना पहले दर्जे का शैतानी कर्म है ऐसे लोगों के लिए भारतीय धर्म वेत्ताओं ने “ब्रह्म राक्षस” शब्द का प्रयोग कर उनकी तीव्र निन्दा की है।

दुनियाँ में प्रमुख तीन ही वर्ग हैं। चौथे वर्ण को हम इसलिए छोड़ देते हैं कि उनकी मनुष्यता अभी बहुत अधूरी है। उन तक पुस्तकों का और उपदेशों का प्रभाव नहीं पहुँच सकता। बुद्धि जीवी—ब्राह्मण, श्रमजीवी—क्षत्रिय, व्यापार जीवी—वैश्य। यह तीनों श्रेणियाँ ही बुद्धि संस्कार युक्त होने के कारण द्विज कहलाती हैं। शूद्र शब्द कर्मी-करीब पशुत्व का बोधक है। जो लोग विचार, बुद्धि, ज्ञान एवम् अन्तःकरण की दृष्टि से पशु हैं उन्हीं के लिए शूद्र शब्द काम में लाया गया है। यह लोग अध्यात्म ज्ञान को समझने में असमर्थ हैं, छल, कपट, आत्मश्लाघा, लोभ और भय ही इन का पथ-प्रदर्शन करता है। चूँकि शूद्र लोग अध्यात्म ज्ञान को समझने में असमर्थ हैं इसलिये उन्हें इसका अनाधिकारी ठहराया गया है। शूद्रों को छोड़कर हमारा हर एक द्विज से अनुगोद है कि वे अपने जीवन व्यवसाय में—बुद्धि, श्रम, व्यापार में—ईमानदारी बरतें। अपने व्यवहार को ऐसे रखें जिससे जन समाज के सामने शिर ऊँचा उठाकर यह कहा जा सके कि ‘मैं मनुष्य हूँ—मैं मनुष्यता को कलङ्कित नहीं करता—मैं मनुष्यता का गौरव जानता हूँ और उसे तिरस्कृत नहीं कर सकता।’

आत्म-सम्मान का राज-पथ यही है कि कारोबार में, आचरण में प्रामाणिकता रखिये। बुद्धिजीवी हैं तो अपने ज्ञान का अपने लिए और दूसरों के

लिए ऐसा प्रयोग करिये जिससे पथ-भ्रष्टता, अनीति, छल, कगट, दुराव, शोषण, भ्रष्ट, अज्ञान और अशान्ति की वृद्धि न हो। बुद्धि को पवित्र तत्व समझिये और उसे धर्म के साथ ही प्रयुक्त होने दीजिए। वेश्या अपने शरीर का अनुचित उपयोग होने देती है इसलिये उसे तिरस्कृत एवम् घृणित ठहराया है, बुद्धि का व्यभिचारिणी होने देना वेश्यावृत्ति से असंख्य गुना घृणित एवम् पाप पूर्ण है। सचाई से, अन्तःकरण की साक्षी देकर जो बात आप जिस प्रकार ठीक समझते हैं उसे उसी प्रकार प्रकट करिए। इससे आपकी आमदनी कदापि कम नहीं होगी। अनीति का पैसा चोरों के घर, वकीलों के घर, डाक्टरों के घर, वेश्या के घर चला जाता है। मुफ्तखोर उसे खाते उड़ाते हैं अपने लिए वह क्लेश ही छोड़ता है, धैर्य पूर्वक यदि कम पैसा कमाया गया है तो विश्वास रखिए वह आपके काम आवेगा, आनन्द की वृद्धि का साधन होगा।

प्रामाणिकता के साथ व्यापार करना एक प्रकार के यज्ञ के समान है। उसमें निजी लाभ भी है और दूसरों का लाभ भी व्यापारी को मुनाफा मिल जाता है और ग्राहक को सन्तोषजनक वस्तु। दोनों ही प्रसन्न रहते हैं और आगे के लिये दोनों का मन मिला रहता है। प्रशंसा और आदरभाव का द्वार खुला रहता है सो अलग। किसी ग्राहक से एक दिन अनुचित लाभ लेकर बहुत-सा मुनाफा ले लेने की अपेक्षा, व्यापारी को इसमें अधिक लाभ है कि उचित रीति से थोड़ा लाभ ले। अधिक ठगा हुआ ग्राहक एक दो बार से अधिक न आवेगा किन्तु थोड़ा लाभ लेने पर वह बार-बार आवेगा, चिरकाल तक सम्बन्ध रखेगा और नये ग्राहक लावेगा। हिसाब लगाकर देख लीजिए अन्ततः वही व्यापारी अधिक लाभ में रहेगा जो थोड़ा मुनाफा लेता है, पूरा तोलकर देता है, पूरा तोलकर लेता है और कुछ कहकर कुछ वस्तु नहीं भेड़ता।

मनुष्य को न्याय परायण बुद्धि जीवी बनना चाहिए, खरी मजदूरी करने वाले श्रमजीवी बनना, ईमानदारी का व्यापार मनुष्यता की शोभा है। क्योंकि इस में सब दृष्टि से लाभ रहेगा। पैसे की दृष्टि से लाभ में रहेगा, समाज में ऊँची निगाह से देखा जायगा, ख्याति बढ़ेगी, प्रतिष्ठा प्राप्त होगी, झूझटों से बचेंगे और सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि अन्तःकरण शान्ति और

स्वस्थता अनुभव करेगा। आदर और प्रतिष्ठा युक्त वार्षावाणी, मलयाचल की शीतल सुगन्धित वायु की तरह चारों ओर प्रभावित होगी, जिसके दिव्य प्रभाव से रोम-रोम में उल्लास मर जावेगा।

प्रतिष्ठा, सम्मान, आदर और इज्जत का जीवन ही जीवन है। आप जो कुछ भी काम करते हैं उसको ईमानदारी और प्रामाणिकता से भर दीजिए। खरे बनिए, खरा काम कीजिए, खरी बात कहिए। इससे आपका हृदय हलका रहेगा और निर्मयता अनुभव करेगा। ईमानदारी, खरा आदमी, भले मानस यह तीन उपाधि यदि आपको अपने अन्तस्थल से मिलती हैं तो समझ लीजिए कि आपने जीवन फल प्राप्त कर लिया स्वर्ग का राज्य अपनी मुट्ठी में ले लिया प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए वीरोचित कार्य का अंवलम्बन लीजिए-

मूल्यवान् वस्तुओं को पास रखने पर उनकी रक्षा की जिम्मेदारी भी उठानी पड़ती है। घर में धन रखा हो तो उसकी सुरक्षा के लिये तिजोरी की व्यवस्था करनी पड़ती है। चौकीदार, पहरे वाले रखने पड़ते हैं। चोर डाकुओं से बचने का उपाय करना पड़ता है। आ गड़े तो उनका सामना करने के लिए भी तैयार रहना होता है। यह सब जिम्मेदारी धन के साथ ही हैं यदि धन न हो तो इनमें से एक भी बात की चिन्ता नहीं होती। मनुष्य के लिए आत्म-गौरव और आत्म-सम्मान ऐसी ही धन गांथि है उनकी रक्षा के लिए कुछ व्यवस्था करनी पड़ती है, कुछ जिम्मेदारी उठानी होती है। स्वाभिमान से हीन व्यक्ति अपमानजनक स्थिति में पड़ा रह सकता है पग पग पर पददलित और तिरस्कृत होना पसन्द कर सकता है। जूठन खा सकता है, भीख मांग सकता है, रोटी के टुकड़े के लिये कुत्ते की तरह दुम हिला सकता है पर जिसका आत्माभिमान जीवित है, उससे यह सब किसी भी प्रकार न हो सकेगा। हलवाईयों की दुकानों के आस-पास कुछ कंगले बैठे रहते हैं, खाने वाले ने पत्तल-दौने फाँके कि उनसे चिपटी हुई जूठन को चाटने के लिये वे लोग लपके, कभी-कभी तो इसके लिये वे आपस में लड़-झगड़ भी पड़ते हैं। विवाह, मृतक भोज आदि की दावतों का समाचार सुनकर कुछ मनुष्य दरवाजे



पर आ बैठते हैं और कुछ भोजन मांगने के लिये बुरी तरह दांत घिसते हैं। दुत्कारे जाते हैं, गालियां खाते हैं, तब कुछ पाते हैं अन्यथा खाली हाथों लौटते हैं। यह मनुष्यता को कलङ्कित करने वाली स्थिति है। जूठन खाकर पेट भरने की अपेक्षा, घास-पात खाकर रह जाना अच्छा है। सतीत्व बेचकर उग्र पूर्ति करने की अपेक्षा उपवास कर लेना अच्छा है।

स्वाभिमानी मनुष्य को यह जिम्मेदारी अपने ऊपर लेनी पड़ेगी कि वह अपमान का कड़ुआ घूँट पीने से इनकार कर दे। द्रोपदी के अपमान का बदला चुकाने के लिये कुरुक्षेत्र का मैदान खून से लाल कर दिया गया था। दुर्योधन की जाँघ को गदा से तोड़कर ही दम लिया था। हमारा तात्पर्य किसी को भी भीम कर्म करने के लिए उत्तेजित करने का नहीं वरन यह बताने है कि अपमान कितना कड़ुआ घूँट है और उसका प्रतिरोध करने के लिये लोग कितनी बड़ी जोखिम तक उठाने में नहीं हिचकते। जो आत्म-त्याग की इतनी बड़ी जोखिम उठाने को तैयार रहें वे आत्म-गौरव जैसी अमूल्य सम्पत्ति की रक्षा कर सकते हैं। खजाने के पहरेदार को डाकुओं से लड़ने के लिये प्राण की बाजी लगाकर बन्दूक पकड़नी होती है। स्वाभिमान के खजाने की रक्षा में भी जोखिम और जिम्मेदारी से डरते हैं। उनके लिए सम्मान को सुरक्षित रखना कठिन है।

आप दूसरों का सम्मान करना सीखिये— इससे आपके सम्मान की रक्षा होगी। नियम है कि—‘दूसरों के साथ वैसा व्यवहार करिए जैसा अपने लिये चाहते हैं। किसी को “तू” कहकर मत पुकारिये। यह असभ्य भाषा का शब्द है जिसका अध्यात्म मार्ग के पथिक को जल्द से जल्द अपने शब्द कोष में से निकालकर बाहर कर देना चाहिए। अच्छा हो कि—आप आज से ही— अभी से ही—इसी घड़ी से ही “तू” का उच्चारण भुला देने का प्रयत्न करना आरम्भ कर दें। नौकरों को, बालको को, स्त्रियों को, छोटों को, किसी को भी ‘तू’ कहकर मत पुकारिए। यह अपमान सूचक शब्द जिसके लिये कहा जाता है उसके आत्म-गौरव को गिरा देता है। वैसे तो ‘आप’ शब्द ही सबके लिए ठीक है पर अधिक से अधिक ढाल यह रखी जा सकती है कि ‘तुम’ शब्द का

प्रयोग कर लिया जाय। यह 'तुम' भी मधुर स्वर में हलके ढंग से इस प्रकार प्रयोग करना चाहिए जिसमें आदर सूचक ध्वनि निकलती हो। कटु शब्द बोल कर अपना और दूसरों का दिल दुखाने से क्या लाभ? जब उसी बात को नरमी के साथ कहा जा सकता है और उसका प्रभाव भी अधिक होता है तब नाराज होकर अपना खून सुखाने, दुर्गुण बढ़ाने और दूसरे को चिढ़ाने से क्या लाभ होता है?

ईमानदारी से चलने और मधुर भाषण एवं शिष्ट व्यवहार के आधार पर आत्म-सम्मान का तीन चौथाई प्रश्न हल हो जाता है जब अपनी ओर से बेईमानी या असभ्य व्यवहार का आरम्भ नहीं किया जाता तो संघर्ष के अवसर प्रायः बहुत कम आते हैं, बदले के रूप में जो झगड़े उठ खड़े होते हैं उनकी मधुर व्यवहार के कारण जड़ ही कट जाती है। कहते हैं कि एक हाथ से ताली नहीं बजती है। अपना पक्ष यदि स्वच्छ हो तो विपक्षी की झगड़ालू वृत्ति भी शान्त हो जाती है। ईंधन न मिलने पर अग्नि अपने आप बुझ जाती है। इसी प्रकार दूसरे लोग यदि बुरे स्वभाव के हों तो अपनी सुजनता के कारण उन्हें अनुचित व्यवहार करने का न तो अवसर मिलता है और न साहस होता है। इस प्रकार सत्तर अस्सी प्रतिशत वे अवसर टल जाते हैं जिनमें पड़कर प्रायः मनुष्य अपमानित हुआ करता है।

अब एक चौथाई प्रश्न शेष रह जाता है। बीस-तीस प्रतिशत अवसर ऐसे लोगों की ओर से आते हैं जिनकी वृत्तियाँ अत्यन्त क्रूर, शोषक और अन्यायग्रस्त हो गई हैं। किसी कमीने आदमी को धन, अधिकार, ऊँचा पद, शारीरिक बल, तेज मस्तिष्क कोई फायदेमन्द काम मिल जाय तो उसका अहङ्कार अत्यन्त विकराल रूप से बढ़ने लगता है। उस बाढ़ में यदि कोई रोकथाम न लगे, नियन्त्रण न हो तो कुछ ही समय में वह इतना उग्र हो जाता है कि अपनी समता में किसी को भी नहीं ठहराता। शतरंज के खेल में 'प्यादा' जब 'फर्जी' हो जाता है तो वह टेढ़ा-टेढ़ा चलने लगता है। नीच वृत्तियों के लोग अपनी औकात से अधिक सम्पदा प्राप्त कर लें तो उनके घमण्ड का ठिकाना नहीं रहता उस घमण्ड में मतवाले होकर वह शिष्टाचार, सभ्यता



और मनुष्यता तीनों को ही भूल जाते हैं और नाम मात्र के कारण पर या कभी-कभी बिना कारण भी दूसरों का अपमान करते हैं। क्योंकि उनमें सद्गुण तो होते नहीं जिनके आधार पर सच्चा सम्मान प्राप्त कर सकेंगे आत्मा की भूख सम्मान प्राप्त करने की होती ही है। उसे बुझाये बिना चैन नहीं पड़ता तब वे दूसरों का अपमान करके अपना बड़प्पन प्रकट करना शुरू करते हैं और बढ़ते-बढ़ते इतने आगे बढ़ जाते हैं कि दूसरों का अपमान करना उनके बाँए हाथ का खेल हो जाता है। आदमखोर बाघ की डाढ़ में जब आदमी के खून का चस्का लग जाता है तो वह जानवरों की शिकार छोड़कर इस धुन में रहता है कि कहां आदमी पाऊँ और कब अपनी लपक बुझाऊँ। ठीक इसी प्रकार की आदत उन लोगों को पड़ जाती है, जब मौका पाते हैं, बिना उचित कारण के दूसरों पर बरस पड़ते हैं और उनकी प्रतिष्ठा खराब करते हैं। ऐसे लोगों पर साधारण विनय, सभ्यता, भलमनसाहत का कुछ प्रभाव नहीं पड़ता। या तो उन्हें पिघलाने के लिए असाधारण धैर्य वाला चिर तपस्वी आध्यात्मिक योगी चाहिये या फिर घूँसे का जवाब लात से देकर झुकाया जा सकता है।

इस प्रकार के अहङ्कारी व्यक्ति आतङ्क फैलाकर उनका अधिक लाभ भी उठाते हैं। गरीब और निर्बल लोगों का शोषण करना—यह एक बे पूँजी का बहुत ही सरल तथा लाभदायक व्यवसाय साबित होता है। वे अपना आतङ्क जमाते हैं, अपने जैसे लोगों की गिरोह बन्दी करते हैं और उससे डरा धमकाकर साधारण श्रेणी के असङ्गठित लोगों को लूटते-खसोटते हैं, हर स्थान पर ऐसे लोग मिल सकते हैं जो आतङ्क के बल पर ही पेट भरते और सम्पत्ति जमा करते हैं। लड़ाई-झगड़े, मार-पीट, गाली-गलौज, चोरी-जारी करना कराना इनके बाँए हाथ का खेल होता है, अपने पड़ोसियों को चैन से न बैठने देने में, उलझाये रखने में ही इनका चौधरीपन चल सकता है अतएव अपनी उपयोगिता कायम रखने के लिये नाना प्रकार के उपद्रवों की सृष्टि करते रहते हैं।

तीसरे प्रकार के वे कपटी और मायावादी लोग हैं जो धर्म की, भल-



मनसाहत की, विद्वता की, बुजुर्गी की, पंचपने की आड़ में छिपकर शिकार खेलते हैं। सत्यता उनमें होती नहीं इसलिये अपनी अमत्य एवम् काली भावनाओं को धर्म, ईश्वर भक्ति, बुजुर्गी आदि का चोला पहनाकर लोगों की आँखों में धूल झोंकते हैं और ऐसे विचार एवम् कार्यों को प्रोत्साहन देते हैं जिनसे उनके व्यक्तिगत अहङ्कार की पूर्ति हो। भले ही उनकी क्रिया से किसी का कितना ही अनिष्ट क्यों न होता हो, किसी को कितना ही कष्ट क्यों न सहना पड़ना हो। बाहर से दया धर्म की चादर ओढ़कर अन्दर घोर पाषाण हृदय छिपाये रहते हैं, यह पाखण्डी लोग बुरे से बुरे कर्म करा सकते हैं पर होने चाहिये वे पर्दे की आड़ में यदि कोई अपनी अन्तर्वाणी को स्पष्ट रूप से प्रकट करें और वह इनकी कण्ट चादर पर छपे हुए सिद्धान्तों के विपरीत पड़ती हो तो बस समझ लीजिए—अनर्थ उपस्थित कर देंगे। ऐसी चीख पुकार मचायेंगे मानों सारी पृथ्वी की धर्म धुरी इन्हीं की छाती पर रखी हुई है और यदि ये उसे न सँभाले रहेंगे तो दुनियाँ से धर्म लोप ही हो जायगा।

ऐसे लोग मानवीय स्वाभिमान के लिये एक चुनौती के समान हैं। इनकी प्रवृत्तियों को सहन कर लेने का अर्थ है उनके कार्य में सहयोग देना। यह लोग साधारणतः तर्क, दलील, प्रमाण और प्रार्थना से पिछलते नहीं। रिश्तत देकर या तो इन्हें शान्त किया जा सकता है या फिर दण्ड देकर। उनका अन्याय सहन कर लेने या रिश्तत देकर शान्त करने से कुछ समय के लिए काम भले ही चल जाय पर कुछ समय पर दूसरे रूप में या दूसरों पर उनका असुरत्व प्रकट होगा और फिर पूर्ववत् यन्त्रणाओं की सृष्टि होने लगेगी। पूर्ववत् ही नहीं पहले से भी अधिक तीव्रगति से, क्योंकि प्रत्येक सफलता के साथ उसकी और निरकुशता बढ़ती जाती है। अन्याय और निरकुश अहङ्कार के सामने आत्म समर्पण कर देना बेइज्जती का दूसरा रूप है। बेईमानी का आचरण करके जिस प्रकार मनुष्य अपने अभिमान को खो देता है उसी प्रकार अत्याचारी के आगे नाक रगड़ने से भी आत्म-गौरव नष्ट करता है। आत्म-समर्पण के परिणाम स्वरूप अपना स्वाभिमान, साहस, तेज नष्ट हो जाता है। बदनामी फैलती है, लोग कायर और नपुंसक समझते हैं, आगे के लिए दिल



कमजोर हो जाता है, निराशा, गिरावट और काहिली की हल्की सी सतह ऊपर छाने लग जाती है। अपनी पराजय को देखकर दूसरे अनेक लोग भी उसी तरह डर जाते हैं और उस भय की जलन से सद्गुणों के वे अनेक अंकुर जलकर नष्ट हो जाते हैं जो मानस भूमिका में थोड़े ही समय पूर्व जमे थे और अपरिपक्व थे। अन्याय के सामने माथा टेकने का परिणाम करीब-करीब उतना ही भयङ्कर होता है जितना कि स्वयं अन्याय करने का। सच तो यह है कि अन्याय सहने वाला अन्याय करने वाले से भी अधिक पापी है। कहते हैं कि—“जालिम का बाप-बुजदिल” होता है। यदि अन्याय सहने के लिए लोग तैयार न हों, उसका विरोध प्रतिरोध करने के लिए तत्पर हो जावें तो निस्सन्देह अपराधों का अन्त किया जा सकता है।

अन्याय और अत्याचारों की करतूतें मनुष्यता के नाम एक खुली चुनौती है जिसे वीर पुरुषों को स्वीकार करना चाहिए। अपने ऊपर न सही, दूसरे निर्दोष व्यक्तियों के ऊपर यदि जुल्म होता है तो उसका प्रतिरोध करना आवश्यक है। बुराई से लड़ना हर स्वाभिमानी का कर्तव्य है। अन्याय के साथ बहादुर सेनापति की तरह जूझ पड़ना चाहिये। बुद्धिमानी से हाथ, पांव बचाकर, पैतरा बदल कर युद्ध करना और एक योद्धा जिन कुशलताओं से काम लेता है उनका प्रयोग कर सफलता की प्राप्ति करनी चाहिये। साथ ही इसके लिये भी तैयार रहिए कि उस युद्ध में यदि जूझ जाना पड़े, सर्वस्व नष्ट हो जाय, वीर गति प्राप्त होतो उसे हँसकर स्वीकार किया जाय। योद्धा के लिए विजय और वीरगति एक समान ही आनन्ददायी हैं क्योंकि दोनों में ही एक समान आत्म गौरव की रक्षा होती है। विजयी वीरों के नाम इतिहास में गौरव के साथ लिखे हुए हैं पर पराजित वीरों के नाम उनसे भी अधिक आदर के साथ स्वर्णाक्षरों में लिखे हुए हैं ईसामसीह दुष्टों के आगे हार गया, वीर हकीकतराय, बन्दा बैरागी, रणा प्रताप पराजित कहे जा सकते हैं परन्तु जिनकी आँखें हों वह देखें कि पराजय, विजय से अधिक मूल्यवान् है। छन महापुरुषों का आत्म-गौरव इन पराजयों ने और भी अधिक चमका दिया। क्या वे पराजयों—विजय से कम महत्वपूर्ण हैं? अन्याय के विरुद्ध लड़ते रहना

वास्तव में एक बड़ी ही सम्माननीय बीरोचित जीवन प्रणाली है, जिसे हर मनुष्य को अपने जीवन का एक अङ्ग बना लेना चाहिए।

आत्म-सम्मान की प्राप्ति और रक्षा के तीन उपाय हैं (१) अपने विचार और व्यवसाय को ईमानदारी से भरा हुआ रखिये (२) अपने भाषण और व्यवहार को आदर और सभ्यता पूर्ण रखिये (३) अपराध और ज्यादाती के खिलाफ धर्म-युद्ध जारी रखिये। इस त्रिवेणी में स्नान करते हुए सच्चे आनन्द का लाभ करेंगे और मानव जीवन की सबसे बड़ी नियमित आत्म-सम्मान की प्राप्ति और रक्षा में समर्थ हो सकेंगे।

बाहरी व्यवहार ही नहीं अन्तःकरण भी शुद्ध रखिये—

ऊसर भूमि में बीज नहीं जमता। क्योंकि उसमें उत्पादक शक्ति का अभाव होता है, चाहे कैसा ही बढ़िया बीज डालिए, परिश्रम पूर्वक सिंचाई कीजिये पर ऊसर भूमि में हरे भरे पल्लवित पौधे लहलहावेंगे, यह आशा करना व्यर्थ है। अच्छे पौधे उसी भूमि में उगेंगे जिसके गर्भ में उर्धरा शक्ति विद्यमान होगी। इसलिए अच्छा किसान जब बढ़िया फसल की बात सोचता है तो सबसे पहले खेती की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाने का प्रयत्न करता है। अच्छी जमोन लेता है, खाद डालता है, जुताई करता है। जब उसे विश्वास हो जाता है कि खेत में काफी उर्वरा शक्ति हो गई तब वह उसमें बीज डालता और अच्छी फसल काटता है। ऊसर एवम् वीर्य हीन खेत में बीज बो देने पर भला किसान के हाथ क्या लगेगा? बीघारे का बीज और परिश्रम मुफ्त में ही चला जायगा। इसी प्रकार जीवन को उन्नत, प्रभावशाली, सम्पत्तिवान्, बलिष्ठ, विवेकयुक्त, सद्गुणी बनाने से पूर्व इस बात की आवश्यकता है कि अन्तःकरण में आत्म सम्मान प्राप्त करने की उत्कण्ठा प्रचण्ड गति से हिलोरें भर रही हो। आवश्यकता आविष्कार की जननी है। जरूरत पड़ते पर बुद्धि उपायों की खोज करती है, जिन्हें जरूरतें नहीं, इच्छा आकांक्षा नहीं उन्हें उपाय ढूँढ़ने का परिश्रम भी प्रिय नहीं होता। जीव को अनेक दिशाओं में उन्नत एवं समृद्ध बनाने वाली उत्पादक शक्ति का नाम है—“आत्म-सम्मान की आकांक्षा।” जो अपने को प्रतिष्ठित, बड़ा आत्मी, महापुरुष, अधिकारी बनाना



चाहता है वह उसके लिये उपाय ढूँढ़ेगा और यह सचाई सूर्य की तरह स्पष्ट है—“ढूँढ़ने वाले को मिलता है।” जिसने खोजा है उसने पाया है।

विद्वत्ता, धन, पदवी, अधिकार, कला-कौशल, उत्तमस्वास्थ्य, ऐश्वर्य, नैतृत्व आदि प्रतिष्ठास्पद पदार्थ प्राप्त करने के लिए जितने परिश्रम, प्रयत्न और धैर्य की आवश्यकता है वह यों ही उत्पन्न नहीं हो जाता। तामसी वृत्तियाँ सदैव आलस्य और अकर्मण्यता की ओर झुकाती हैं। इसलिए अक्सर ऐसे विचार भी उठा करते हैं कि “जो है उसी में सन्तुष्ट रहो, कोशिश करने से क्या फायदा, भाग्य का होगा तो घर बैठे मिल जायगा।” अकर्मण्यता के साथ आलस्य आता है बुद्धि और शरीर से कड़ा परिश्रम लेना तामसी वृत्तियाँ नापसन्द करती हैं, वे चाहती हैं कि बिना मेहनत किये काम चल जाय, आराम से पड़ा रहा जाय। हम देखते हैं कि इन्हीं तामसी वृत्तियों में अधिकांश जीवन ग्रसित रहता है। तदनुसार वे अपने अन्दर छिपे पड़े हुए शक्तियों के अतुलित भण्डार को यों ही निकम्मा पड़ा रहने देते हैं और अर्ध मूर्च्छित अवस्था में जीवन-क्रम चलाते हुए आयु को पूर्ण कर जाते हैं। अच्छी परिस्थितियाँ और सुविधाएँ मिलने पर भी कोई विशेष उन्नति नहीं हो सकती यदि मनुष्य के अन्दर महत्वाकांक्षा न हो। वे ही लोग ऊँचे उठ सकते हैं, सफल जीवन हो सकते हैं जो उस प्रकार की इच्छा आकांक्षा करते हैं। यह इच्छायें जब प्रबल होती हैं तो शरीर और मस्तिष्क की शक्तियों को उसी प्रकार जबर्दस्ती खींच ले जाती हैं जैसे तेज चलने वाला आतुर घोड़ा, जिस रथ में जुना है उसे सरपट दौड़ा ले जाता है। अपनी गौरव बढ़ाने की, सम्मान प्राप्त करने की, अपना महत्ता प्रकट करने की महत्वाकांक्षा जब जोर मागती है तो योग्यताएँ और शक्तियाँ अपना-अपना काम करने में जुट जाती हैं और जो कार्य पर्वत के समान दुर्गम दिखाई पड़ते थे वे बड़ी आसानी से पूरे हो जाते हैं। सञ्चित योग्यताएँ तो अपना काम करती ही हैं—साथ ही आवश्यकता के दबाव के कारण सोई हुई अविकसित शक्तियाँ भी जागृत होकर क्रियाशील बनती जाती हैं। मानवीय शक्तियों का अन्त नहीं, जब जागरण का प्रवाह चल पड़ता है तो इन शक्तियों की संख्या और मात्रा में दिन-दिन उन्नति होती जाती है।

जो व्यक्ति पहले मन्द बुद्धि, दुर्बल शरीर, आलसी हतवीर्य दिखाई पड़ते थे वे ही आत्म-सम्मान की आकांक्षा को तीव्र करके जब कर्त्तव्य पथ पर चल पड़े तो इतने तीव्र बुद्धि, स्वस्थ, कर्मनिष्ठ और तेजस्वी सिद्ध हुए जिनकी आशा उनके आरम्भिक जीवन में बिल्कुल नहीं होती थी।

इच्छा की शक्ति महान् है उस महाशक्ति के लिये इस संसार में कोई भी वस्तु प्राप्त करना असम्भव है। इन्हीं सब बातों पर गम्भीर विवेचन करने के उपरान्त अध्यात्म शास्त्र ने यह उपदेश किया है कि इस संसार में समृद्धि सौभाग्य और परलोक में सुख-शान्ति प्राप्त करने की इच्छा करने वालों को अपने आत्म-सम्मान को बढ़ाने और उसकी रक्षा करने का प्रबल प्रयत्न करना चाहिए। आध्यात्मिक गुणों में 'आत्म-सम्मान' का स्थान बहुत ऊँचा है क्योंकि यह प्रेरणाओं का केन्द्र है। बिजली घर का शक्ति स्रोत नगर की सारी बतियों को प्रकाशवान् करता है, आत्म सम्मान जन्म महत्वाकांक्षा का विद्युत् प्रभाव नस-नस में योग्यता और चतुरता भर देता है। अकर्म करने से रोक्ता है और सत्कर्म में प्रवृत्त करता है। अपने चारों ओर ऐसे धर्म युक्त, सुख-शान्तिमय, पुनीत वातावरण का निर्माण कर देता है जिसमें रहकर मनुष्य हर घड़ी यह अनुभव करता है कि मैंने अपने जीवन का सदुपयोग किया, जीवन-फल पाया और भूलोक के अमृत का प्रत्यक्ष रूप से आस्वादन किया।

आत्म-सम्मान की प्रारम्भिक शिक्षा के लिए एक बहुत पुराना मन्त्र है जो आज की परिस्थितियों में भी ज्यों का त्यों उपयोगी बना हुआ है। वह मन्त्र है—'सादा जीवन उच्च विचार।' प्राचीन समय में बालकपन से लेकर वृद्धावस्था तक इसी ढाँचे में लोगों के जीवन ढले रहते थे। आज बेतरह का जमाना बरत रहा है। जीवन को बनावटी और विचारों को नीच बनाने की लत लोगों को पड़ती जाती है। भ्रमवश वे ऐसा समझते हैं कि हमारी बनावट चमक-दमक के भुलावे में आकर लोग हमें बड़ा आदमी समझने लगेंगे। वे अपनी औकात से अधिक टोम टिमाक बनाते हैं, विलायती फैशन की नकल, पहनने-ओढ़ने, खाने-पीने, बोलने-चालने में करते हैं, वे सोचते हैं कि पैण्ट-कोट पहनने, अंग्रेजी बोलने और अंग्रेजों जैसा बतवि करने से लोग बड़ा आदमी



समझने लगेंगे। फलतः वे पश्चिमी सभ्यता अपना लेते हैं। अंग्रेजी ढङ्ग का आहार चाय, बिस्कुट, सोडा, शराब, सिगरेट व्यवहार करते हैं, हूटी-फूटी अंग्रेजी में ही बात करते हैं। जिस इच्छा से भ्रमवश इस प्रयत्न को वे करते हैं, फल उससे बिल्कुल उल्टा होता है। कारण यह है कि इस देश की गरम आबहवा में योरोप के धीर शीत प्रधान देशों की चाल-ढाल उल्टी और हानिकारक है। इससे उनके स्वास्थ्य पर बड़ा बुरा असर पड़ता है। दूसरी बात यह है कि अनुपयुक्त और बुरे उद्देश्य से की हुई नकल सदा उपहासास्पद होती है। कहानी है कि—एक कौआ मोर के पर लगाकर मोर बनने लगा इस पर मोर और कौए दोनों ही उससे क्रुद्ध हो गये और दोनों ने उसे बहिष्कृत कर दिया।

इन निरर्थक उपहासास्पद प्रयत्नों को छोड़कर आत्म-सम्मान के मार्ग पर रहना ही धर्म है। अपनी वेशभूषा में सम्मान अनुभव करना चाहिये। सादगी किफायतशारी और संस्कृति रक्षा, जब तीनों ही बातें अपनी स्वदेशी वेशभूषा में प्राप्त होती हैं तो फिर ऐसा पटनावा क्यों पहनें जो हानिकार भी है और आत्म सम्मान की दृष्टि से अनावश्यक भी। हम घाती कुर्ता क्यों न पहनें? यह भारतीय पोषाक है, सादगी से भरी हुई है और अपने मन के भावों से परिपूर्ण है। “सादा जीवन उच्च विचार” के मन्त्र के दोनों ही भावों की रक्षा स्वदेशी पोषाक पहनने से होती है। चापलूसी करने, नकली बनने या आत्म-समर्पण करने का भाव इसमें नहीं है वरन् आत्म गौरव और देशभक्ति का पुट है। समता, नम्रता, गम्भीरता, दूरदर्शिता और विचार-शीलता को यह प्रकट करती है।

किसी ढाँचे में अपने को ढालने के लिए आसपास का वातावरण भी वैसा ही बनाना पड़ता है। परिस्थितियों का अप्रत्यक्ष रूप से विशेष प्रभाव पड़ता है, कई व्यक्ति अच्छे विचार तो रखते हैं पर आसपास की बुरी परिस्थितियों को नहीं बदलते फलतः ऐसे अवसर आ जाते हैं जब कि उनसे कार्य भी बुरे ही होने लगते हैं। अतएव अपने दैनिक कार्यक्रम में से उन बातों को चुन-चुन कर निकाल देना चाहिये जिनके कारण अवांछनीय परिणाम उत्पन्न

होने की आशङ्का हो। इस संशोधन में जितनी सूक्ष्म बुद्धि से काम लेंगे, उतनी ही अधिक सफलता होगी। छोटे-छोटे रोड़े जो नित के अभ्यास में आजाने के कारण कुछ बहुत बुरे नहीं मालूम पड़ते, किसी दिन दुःखदायी घटना उपस्थित कर सकते हैं इसलिये उन्हें पहचानने और हटाने में ढील न करनी चाहिये। रेल की पटरी पर रखा हुआ एक छोटा-सा पत्थर का टुकड़ा, समूची रेल को उलट देने का कारण हो सकता है इसी प्रकार छोटे-छोटे अनुचित प्रसङ्ग किसी दिन आत्म-सम्मान के घोर घातक प्रमाणित हो सकते हैं।

प्रतिष्ठा का एक आधार वाणी का उचित उपयोग—

मनुष्य में अन्य सब प्राणियों से एक विशेषता यह है कि वह वाणी द्वारा अपनी अनुभूति और भावनाओं को अच्छी तरह प्रकट कर दूसरों को अपनी ओर आकर्षित कर सकता है। यह परमात्मा की मनुष्य को सबसे बड़ी देन है। पर हम देखते हैं कि आजकल लोग इस अमूल्य निधि का नित्य दुरुपयोग कर संसार में अनेक प्रकार के कष्ट, दुःख, अपमान, निन्दा आदि सहनकर रहे हैं तथा अपने जीवन को भी गंहित और पतित बनाते जा रहे हैं। हमें आज इसी विषय पर गम्भीरतापूर्वक सोचना है कि हम अपनी वाणी के दुरुपयोग को रोककर उसे किस तरह सुसंस्कृत, सुमंगलकारी, सर्वकल्याणकारी बनावें ताकि उसके द्वारा संसार में हम सर्वत्र असत्य, छल, कपट, पीड़ा और असन्तोष के म्यान पर स्वर्गीय आनन्द और उल्लासपूर्ण वातावरण का निर्माण कर सकें।

शास्त्रों में शब्द को ब्रह्मा की उपमा दी गई है। वास्तव में शब्दों में बड़ी सामर्थ्य है। हम अब किसी शब्द का उच्चारण करते हैं, तो उसका प्रभाव न केवल हमारे गुप्त मन पर अपितु सारे संसार पर पड़ता है, क्योंकि शब्द का कभी लोप नहीं होता, प्रत्येक शब्द वायुमण्डल में गूँजता रहता है और वह समानधर्मी व्यक्ति के गुप्त मन से टकराकर उसमें तदनुरूप प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है। यह अनुभव सिद्ध बान है कि जिसके प्रति हम शब्दों द्वारा अच्छी भावना प्रकट करते हैं, वह व्यक्ति हमारे अनजाने ही हमारा प्रेमी और शुभचिन्तक बत जाता है। इसके विपरीत जिसके बारे में हमारे विचार या शब्द कलुषित होते हैं वे अनायास ही हमारे अहित चिन्तक, शत्रु बन जाते हैं।



अर्थात् शुभ एवं सुमंगल वाणी से आसजनों एवं सर्वसाधारण समाज में सद्भावना का प्रचार होता है जिससे समाज का वातावरण आनन्द और उत्साहपूर्ण बनता है ।

अच्छे और बुरे शब्दों का मनुष्य के जीवन पर बड़ा गहरा असर पड़ता है । अच्छे शब्द बोलने वाले व्यक्ति प्रायः निर्भय, प्रशान्त, प्रफुल्लित एवं आनन्दित पाये जाते हैं, जबकि कटु एवं बुरे शब्दों का उच्चारण करने वाला व्यक्ति क्रोधी, ईर्ष्यालु, दम्भी, असन्तुष्ट एवं कर्कश स्वभाव के होते हैं ।

बुरे एवं गन्दे शब्दों के उच्चारण का अबोध बालकों पर बड़ा बुरा असर पड़ता है, जिससे उनके चारित्र्य का क्रमशः पतन होता जाता है । क्योंकि छोटे बालक जैसे शब्द बड़ों के मुँह से सुनते हैं, वे उन्हीं का बिना अर्थ समझे-बूझे अनुकरण करने लगते हैं । परिणामस्वरूप उनके गुप्त मन में उन बुरे शब्दों के संस्कार बीज रूप से जम जाते हैं, जो बड़े होने पर उनको पतन के गहरे गत में गिरा देते हैं । आजकल बालकों में सिनेमा के अश्लील एवं गन्दे गीतों को गुनगुनाने की प्रवृत्ति दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है । यह बड़ी ही अनिष्टकर बात है । आगे चलकर इस प्रकार के अश्लील भाव संस्कार के रूप में उनके मन को कलुषित कर उनके जीवन को ही मटियामेट करने की सामर्थ्य रखते हैं ।

इसके विपरीत सुमधुर, शान्त एवं पवित्र शब्दों का उच्चारण करने वाले व्यक्ति अपने शब्दों द्वारा न केवल अपने विचारों, भावनाओं एवं संस्कारों को परिमार्जित करते हैं अपितु अन्य अनेक व्यक्तियों को प्रभावित कर उनके जीवन में भी नई प्रेरणा एवं नया मोड़ उत्पन्न करते हैं । अच्छे लेखों एवं कविताओं से अनेक मनुष्यों को सत्प्रेरणायें मिली हैं और उनका जीवन परिवर्तन हुआ है, इससे शब्दों के अतुल सामर्थ्य की कल्पना की जा सकती है ।

हमारा प्रत्येक शब्द हमारे बन्तःकरण पर एक अमिट गुप्त छाप छोड़ जाता है, जो हमारे स्वभाव और चरित्र के निर्माण में योग देता है । हमारे मनीषियों और उपनिषदों ने प्रत्येक शब्द से अत्यन्त सावधान रहने का संकेत

किया है क्योंकि शब्दों में अतुल सामर्थ्य है। जो काम हम वर्षों में नहीं कर पाते उसे मनस्वी और पुरुषार्थी व्यक्ति अपने चुने हुये शब्दों की शक्ति से अल्पावधि में सम्पन्न कर डालते हैं। इसका कारण भी यही है। अतएव हमें शब्दों के इस असीम सामर्थ्य का ध्यान रखते हुए वाणी को सदा मधुर, पवित्र और हितकारी बनाये रखने का प्रयत्न करना चाहिए।

तैत्तिरीय उपनिषद् में कहा गया है—

‘जिह्वा मे मधुमत्तमा’ अर्थात् हे ईश्वर ! मेरी यह जिह्वा सदा मधुर वचन बोले। मैं कभी कटु, कर्कश और कटुवचन द्वारा वाणी को कलङ्कित न करूँ। अतः हम सदा अपने जीवन में, घर में, समाज में प्रत्येक व्यवहार के समय ऐसे ही शब्दों का प्रयोग करें जो मधुर, शिष्ट, उत्साहप्रद एवं हितकारी हों। गोस्वामी तुलसीदास जी ने क्या ही अच्छा कहा है—

तुलसी मीठे वचन ते मुख उपजत चहुं ओर।

वशीकरण एक मन्त्र है, तज दे वचन कठोर ॥

मीठे और हितकारी वचन वास्तव में एक ऐसा वशीकरण मन्त्र हैं, जिससे हमारे इष्ट-मित्र, स्वजन, परिजन ही नहीं सारे संसार के लोग हमारी ओर आकर्षित होकर हम पर अपना स्नेह लुटा सकते हैं फिर क्यों व्यर्थ ही हम कटु, अभद्र एवं अशिष्ट शब्दों के उच्चारण द्वारा अपने चारों के वातावरण को कलुषित और अभंगलजनक बनाकर अपने तथा दूसरों के जीवन को कष्ट-प्रद एवं अशांत बनाने की चेष्टा करें।

शब्द अमृत और विष दोनों का काम करते हैं। जो वाणी सत्य, उत्साह तथा उल्लास बढ़ाने वाली, निष्कारट, मधुर तथा हितकर होगी वही अमृतमयी कहलायेगी। इसके विपरीत जिस वाणी में कठोरता, अहमन्यता, उपहास, कटुता, द्वेषभाव, छिछोरापन आदि होगा वह अपने ओर दूसरों के लिये भी विषमय एवं हानिकारक होगी।

उतना बोलिये जितना आवश्यक हो—

वाणी के दुरुपयोग से हमारी शक्ति का एक बहुत बड़ा अंश नष्ट हो



जाता है। इसलिये जिस इन्द्रिय संयम के लिये ब्रह्मचर्य आदि विधान है उसी तरह वाणी के संयम के लिए मौन की संधाना बताई गई है। महात्मा गांधी ने कहा है—“मौन सर्वोत्तम भाषण है। अगर बोलना ही हो तो कम से कम बोलो। एक शब्द से ही काम चल जाय तो दो न बोली।” फ्रैंकलिन के शब्दों में—“चींटी से अच्छा कोई उपदेश नहीं देता और वह मौन रहती है।” कारलाइल ने कहा है—“मौन में शब्दों की अपेक्षा अधिक वाक् शक्ति होती है।

हम जीवन में जितना अनर्थक प्रलाप करते हैं, निरर्थक शब्द बोलते हैं यदि उतने समय में खूब काम किया जाय तो उतने में एक नया हिमालय पहाड़ बन जायगा शब्दों की इस अथाह शक्ति को व्यर्थ ही नष्ट कर क्या हम दीन नहीं बन रहे हैं ? यदि इन शब्दों का उपयोग हम किसी को सान्त्वना देने में, भगवद् भजन, प्रभु नाम स्मरण, सज्जीत, जप, कीर्तन आदि में करें तो हमारा और समाज का कितना भला हो ? साथ ही हम वाचालता से उत्पन्न दोष, जिनसे लड़ाई, झगड़े, क्लेश, ईर्ष्या, द्वेष आदि का उदय होता है, उनसे बच जावें।

वाचालता, व्यर्थ प्रलाप चाहे वह किसी प्रेरणा से क्यों न हो हानिकर है। इस सम्बन्ध में एक्नेन रिबले ने लिखा है—“अण्डे देने के बाद मुर्गी यह मूर्खता करती है कि वह चहचहाने लगती है। उमकी चहचहाहट सुनकर डोम-कोव आ जाता है वह उसके अण्डे भी छीन लेता है तथा उन वस्तुओं को भी खा जाता है जो उसने अपनी भावी सन्तान के लिये रखी थीं।” कहावत है—“इसी तरह वाचाल व्यक्ति को भी कहा जा सकता है।”

मन्त ईसा ने कहा था—“अपने द्वारा बोले गये प्रत्येक बुरे शब्द के लिये मनुष्य को फंसले के दिन सफाई देनी होगी।” और बुरे शब्दों से हम मौन के द्वारा ही बच सकते हैं।

वार्तालाप और व्यवहार में यह भी ध्यान रखिये —

समाज का सहयोग प्राप्त करना, लोकप्रिय बनना मानव जीवन में एक आवश्यक बात है। वर्तमान युग में जबकि विस्तृत मानव-समाज परस्पर निकट सम्पर्क में आता जा रहा है, राष्ट्रों, द्रोतों, महाद्वीपों की दूरी घटकर उनका

सम्बन्ध पड़ोसियों की तरह होत जा रहा है, विज्ञान और बौद्धिक प्रगति ने मनुष्य का कार्यक्षेत्र व्यापक बना दिया है, ऐसी स्थिति में लोकप्रियता की बात भी व्यापक और महत्वपूर्ण बन गई ।

जो व्यक्ति जितना लोकप्रिय होगा, जिनको समाज का सहयोग जितने बड़े रूप में मिलेगा वह उतना ही महान् बन सकेगा । समाज का सहयोग, लोकप्रियता मनुष्य के अपने ही प्रयत्न, व्यवहार, दूसरों से मधुर सम्बन्ध, सहयोग, सहिष्णुता की भावना तथा अन्य सद्गुणों पर निर्भर है । इसके लिये अपने सोचने में, काम करने में, दैनिक व्यवहार में बहुत कुछ सुधार करना पड़ता है ।

अपने पड़ोसियों, मिलने-जुलने वालों तथा सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों से निकट सम्बन्ध बढ़ाये जायें । उनके सुख-दुःख, हानि-लाभ, चिन्ता, समस्यायें आदि में अपनी अभिरुचि प्रकट करते हुए उनके लिये सहानुभूति सहयोग के प्रयास करना, उन्हें उचित सलाह देकर सहृदयतापूर्वक उनके दुःख-दर्द को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये । इससे दूसरों को अपना बनाया जा सकता है । यदि किसी के दुःख, दर्द दूर करने में इस तरह मदद की जाय तो उस व्यक्ति की सहानुभूति, आत्मीयता सहयोग स्वतः ही मिल जाते हैं । जब इस तरह के व्यक्तियों का क्षेत्र व्यापक हो जाता है तो मनुष्य उतना ही लोकप्रिय बन जाता है ।

देखा जाता है कि दफ्तरों, कारखानों में काम करने वाले व्यक्तियों का व्यावहारिक सम्बन्ध केवल दफ्तर तक ही होता है । एक अध्यापक स्कूल की सीमा तक ही बच्चों से सम्बन्ध रखता है बाद में नहीं । ऐसी हालत में दूसरों से भी किसी तरह के सहयोग की आशा नहीं की जा सकती । एक दूसरे के प्रति हमदर्दी, दिलचस्पी, हादिक सम्बन्ध रखने पर ही आत्मीयता की नोंब लगती है । महापुरुषों की जीवनियों से मालूम होता है कि वे पर-दुःखकातर हो, दूसरों के दुःख द्वन्दों में सहायता करते थे । गिरे हुए को उठाने, भूले-भटकों को मार्गदर्शन देने, उलझनों में दूसरों के साथ देने वाले ही लोकप्रिय बनते हैं, दूसरों को अपना बनाते हैं । महापुरुषों की यह विशेषता रही है कि



वे एक बार भी जिससे मिले वह उन्हें कभी नहीं भुला। इसका कारण है उनका दूसरों के प्रति सहज प्रेम, गहरी सहानुभूति, निश्चल आत्मीयता। जिनके हृदय में अपने-पराये का कोई भेदभाव नहीं वे ही लोकप्रियता प्राप्त करते हैं। स्वार्थी, औपचारिक व्यवहार करने वाला, शुष्क हृदय व्यक्ति दूसरों को अपना नहीं बना सकता।

जब किसी में कोई सद्गुण देखें, उसे कोई सत्कर्म करता पावें तो उस की उचित प्रशंसा करने में भी न चूका जाय। इसके लिये अपना दृष्टिकोण सदैव शुभदर्शी और उदार बनाया जाय। यदि इस तरह का दृष्टिकोण बनाया जाय तो किसी भी व्यक्ति में कुछ न कुछ बातें ऐसी अवश्य मिल ही जायेंगी जिसके कारण उसकी प्रशंसा की जा सके। सर्वथा बुरे व्यक्ति में भी कुछ न कुछ अच्छाइयाँ भी होती हैं। यदि मनुष्य की अच्छाइयों को महत्व देकर उन्हें प्रोत्साहन दिया जाय, प्रशंसा की जाय तो दूसरों के दृष्टिकोण को भी सरस और उदार बनाया जा सकता है। इसमें सुधार की सम्भावनायें निहित हैं। साथ ही बुरा व्यक्ति अपनी प्रशंसा सुनकर अनन्य मित्र, सहयोगी, साथी बन सकता है। दोष दर्शन, छिद्रान्वेषण का दृष्टिकोण हेय है। इससे परस्पर और उत्तेजना मिलती है। वस्तुतः विवेकपूर्वक देखा जाय तो कुछ न कुछ कमी, बुराई हर जगह होती है। आवश्यकता इस बात की है कि अपना दृष्टिकोण अच्छाइयों को देखने का हो और उनके लिये उचित प्रशंसा करने की उदारता हो। इसके लिये तनिक भी कंजूसी न रखी जावे।

अवसर कई बार दूसरे लोगों से लड़ाई-झगड़े हो जाते हैं। किन्तु इससे किसी की निन्दा इधर-उधर नहीं करनी चाहिये। स्वभाववश लड़ाई-झगड़े हो जाना कोई बड़ी बात नहीं है। किन्तु ईर्ष्यावश दूसरे की किसी बुराई या गलती को लेकर उसके सम्बन्ध में दूषित प्रचार करना ठीक नहीं। लड़ाई शांत होने पर पुनः मधुर सम्बन्ध स्थापित हो सकते हैं। किन्तु इस तरह का घृणापूर्ण प्रचार एक विषैला प्रभाव, एक विषैली प्रतिक्रिया पैदा कर देता है। इससे दूसरे पक्ष के लोग तो कट्टर दुश्मन बन ही जाते हैं साथ ही अन्य लोग भी दूषित प्रचार से प्रचारकों के संदेह और शङ्का की दृष्टि से देखते हैं और



कोई जिम्मेदारी या सहयोग देने में हिचकिचाते हैं। कीचड़ के छीटे और उसकी बदबू से सभी दूर ही रहना चाहते हैं।

प्रयत्न तो यह करना चाहिये कि कोई लड़ाई-झगड़ा ही न हो। इसके बावजूद भी ईर्ष्या-द्वेष का स्थायी बनाने, उसे प्रोत्साहन देने के लिए कोई हथ-कण्डे न अपनाये जायें। क्योंकि बढ़ा हुआ ईर्ष्या-द्वेष कभी मौका लगने पर अपने दुष्परिणाम अवश्य पैदा करता है। आवश्यकता इस बात की है कि किसी भी कारण दूसरों से हुए लड़ाई-झगड़े, मनोमालिन्य की खाई को पाटकर पुनः प्रेम सम्बन्ध बनाये जायें। अपनी कोई भूल हो तो उस पर विचार करके शुद्ध हृदय से क्षमा माँग लेना चाहिये। कहीं कुछ विरोध भी करना पड़े तो वह द्वेष बुद्धि रहित होकर नम्र एवं दृढ़ शब्दों में किया जाय। सदुद्देश्य और सदाशयता से किया गया विरोध भी सत्परिणाम पैदा करता है। वह शत्रु के हृदय में भी सम्मानजनक स्थान प्राप्त करता है।

सदैव सबसे मीठा बोला जाय। किसी ने कहा भी है—

कागा काको धन हरे, कोयल काको देय।

मीठी वाणी बोलकर, जग बस, में कर लेय ॥

वास्तव में मीठे वचन बोलकर सारे जग को अपने वश में किया जा सकता है। दूसरों को अपना बनाया जा सकता है। लोगों के हृदय में स्थान पाया जा सकता है। नम्र और मीठे शब्दों से दुश्मन भी अपने बन जाते हैं। इसके विपरीत कटु, तीक्ष्ण, जली-कटी बातें, व्यंग-वाणों से मित्र भी शत्रु बन जाते हैं।

लोकप्रियता के इच्छुकों को आलोचना नहीं करनी चाहिये। यदि किसी का कोई व्यवहार आपको नहीं जचता हो तो आप उनकी आलोचना न कर सम्भव है वह गलती पर न हो और आपही गलती पर हों। आपकी आलोचना वृत्ति से लाभ नहीं हानि ही होगी। सम्भव है कोई व्यक्ति भूलवश, या स्वाभाविक असमर्थता अथवा किसी अन्य कारण से कुछ गलती पर हो, जिसे समझने पर वह उसे दूर भी कर लेगा, किन्तु की गई आलोचना से कोई लाभ न होगा। उल्टा दोनों में मनोमालिन्य पैदा हो जायगा।



आज के वैदिक युग में प्रत्येक व्यक्ति अपनी स्वतन्त्र बुद्धि से सोचता है और जो ठीक समझता है वही करता है। इसलिये दूसरों को आज्ञा देने की प्रवृत्ति नहीं रखनी चाहिये। यदि किसी से कुछ कराना हो तो उसे आज्ञा न देकर अपनी बात सुझाव के रूप में प्रकट करनी चाहिये और उस पर विचार करने की स्वतन्त्रता दूसरों पर ही छोड़ देनी चाहिये। बात-चीत के दौरान में दूसरों को कोई महत्व न देकर अपनी बात धुंआधार रूप में कहना भी ठीक नहीं। इससे कहासुनी और लज्जे जना की स्थिति पैदा होती है। बात-चीत के समय बहुत संयम और समझदारी से काम लेना चाहिये। यदि कोई बात सही और तर्कसङ्गत है तो अपनी हठवादिता छोड़कर उमे मान लेना चाहिये, इससे दूसरों की दृष्टि में मूल्य बढ़ जाता है और प्रतिपक्षी का भी सहयोग तथा आत्मीयता मिल जाती है। अपने मित्र, सहयोगी सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों के स्वभाव, आदतों अध्ययन कर उनके अनुकूल बात करने का ध्यान रखना चाहिये। ऐसी कोई भी बात यकायक नहीं करनी चाहिये जो दूसरों को बुरी लगे।

अपने मित्रों, परिचितों, पड़ोसियों से लेन-देन का व्यवहार ही नहीं करना चाहिये। पैसा सारे विरोध मनोमालिन्य, द्वेष की जड़ है। पैसे के सम्बन्ध में अपना सीमित क्षेत्र रखा जाय। आवश्यकता पड़ने पर दूसरों की सहायता करना बुरा नहीं है, न पैसा लेना ही बुरा है, क्योंकि परस्पर सहयोग, सहायता से ही काम चलते हैं। किन्तु आर्थिक कठिनाई की विवशता, स्वभाव की ढील-ढाल या अन्य कारणों से यदि उधार लिया हुआ पैसा समय पर न लौटाया जा सका तो मित्रता खटाई में पड़ जाती है।

लोकप्रियता, लोकमत की अनुकूलता सहयोग प्राप्त करना मनुष्य के अपने ही व्यवहार, विचार, कार्यपद्धति पर निर्भर करते हैं। मनुष्य अपने बुरे व्यवहार, बुरे आचरण से अपने दुश्मन पैदा कर सकता है और वही अच्छे व्यवहार से प्रशंसक मित्र सहयोगी बना लेता है।

मुद्रक—युग निर्माण प्रेस, गायत्री तपोभूमि मथुरा।



नैतिक एवं सांस्कृतिक पुनरुत्थान के लिए 'युग निर्माण योजना' नामक आन्दोलन विगत १२ वर्षों से सक्रियता पूर्वक चल रहा है। देश विदेश में लाखों सदस्य तथा हजारों शाखाओं द्वारा सुसंगठित तथा सुव्यवस्थित रूप से प्रचारात्मक तथा रचनात्मक कार्यो द्वारा लक्ष्य की ओर सतत प्रगति की जा रही है।

आन्दोलन की विचारधारा के प्रसार के लिए मथुरा से ७ पत्रिकायें प्रकाशित हो रही हैं। अखण्ड ज्योति मासिक, युग निर्माण योजना मासिक, एवं युग निर्माण योजना पाक्षिक पत्रिकायें हिन्दी में तथा गुजराती, मराठी, अंग्रेजी तथा उड़िया पत्रिकायें नियमित रूप से प्रकाशित हो रही हैं।

विचार क्रान्ति एवं भावनात्मक नव निर्माण के कार्य-क्रमों पर प्रकाश डालने के लिये मूल्य ५० पैसे से २) मूल्य तक की लगभग ४०० विभिन्न पुस्तकें प्रकाशित की गयी हैं। लोक सेवियों—प्रचारकों के लिए विभिन्न स्तर के प्रशिक्षण की व्यवस्था भी केन्द्र में है।

प्रकाशक—“युग निर्माण योजना” मथुरा।

मूल्य ५० पैसे

ः युगऋषि पं. श्रीराम शर्मा आचार्य- संक्षिप्त परिचय :



ज्यादा जानकारी यहाँ से प्राप्त करें :
http://hindi.awgp.org/about_us

- **विचारक्रान्ति अभियान के प्रणेता** : विचारों को परिसकृत और ऊँचा उठाने में समर्थ 3000 से भी अधिक पुस्तकों के लेखन के माध्यम से विश्वव्यापी विचार क्रान्ति अभियान की शुरुआत की ।
- **वेद, पुराण, उपनिषद के प्रसिद्ध भाष्यकार** : जिन्होंने चारों वेद, 108 उपनिषद, षड् दर्शन, 20 स्मृतियाँ एवं 18 पुराणों का युगानुकूल भाष्य किया, साथ ही 19 वीं प्रज्ञा पुराण की रचना भी की ।
- **3000 से अधिक पुस्तकों के लेखक** : मनुष्य को देवता समान, घर-परिवार को स्वर्ग, समाज को सभ्य और समग्र विश्वराष्ट्र को श्रेष्ठ बनाने में समर्थ हजारों पुस्तकें लिखकर समयानुकूल समर्थ मार्गदर्शन प्रदान किया ।
- **युग-निर्माण योजना के सूत्रधार** : जिन्होंने शतसूत्री युग निर्माण योजना बनाकर नये युग की आधार शिला रखी ।
- **वैज्ञानिक-अध्यात्मवाद के प्रणेता** : जिन्होंने धर्म और विज्ञान के समन्वय की प्रथम प्रयोगशाला 'ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान' स्थापित कर सिद्ध किया कि 'धर्म और विज्ञान विरोधी नहीं, पुरक है' ।
- **'२१ वीं सदी : उज्ज्वल भविष्य' के उद्घोषक** : जिन्होंने '२१ वीं सदी : उज्ज्वल भविष्य' का नारा दिया तथा युग विभीषिकाओं से भयग्रस्त मनुष्यता को नये युग के आगमन का संदेश दिया ।
- **स्वतंत्रता संग्राम के कर्मठ सेनानी** : जिन्होंने महात्मा गाँधी, मदन मोहन मालवीय, गुरुवर रविन्द्रनाथ टैगोर के साथ राष्ट्र की स्वाधीनता के लिए संघर्ष किया एवं स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी 'श्रीराम मत्त' के रूप में प्रख्यात हुए ।
- **गायत्री के सिद्ध साधक** : जिन्होंने गायत्री और यज्ञ को रुढ़ियों और पाखण्ड से मुक्त कर जन-जन की उपासना का आधार तथा सद्बुद्धि एवं सतकर्म जागरण का माध्यम बनाया ।
- **तपस्वी** : जिन्होंने गायत्री की कठोरतम साधना कर २४-२४ लाख के २४ महापुरश्चरण २४ वर्षों में सम्पन्न किया । प्रकृति प्रकोप को शांत कर अनिष्टों को टाला, सृजन सम्भावनाओं को साकार किया ।
- **अखिल विश्व गायत्री परिवार के जनक** : जिन्होंने अपने जीवनकाल में ही अपने साथ करोड़ों लोगों को आत्मियता के सूत्र में बाँधकर विश्व व्यापी 'युग निर्माण परिवार' - 'गायत्री परिवार' का गठन किया ।
- **समाज सुधारक** : जिन्होंने नारी जागरण, व्यसन मुक्ति, आदर्श विवाह, जाति-पाँति प्रथा तथा परंपरागत रुढ़ियों की समाप्ति हेतु अद्भुत प्रयास किए एवं एक आदर्श स्वरूप समाज में प्रस्तुत किया ।
- **ऋषि परम्परा के उद्धारक** : जिन्होंने इस युग में महान ऋषियों की महान परंपराओं की पुनर्स्थापना की । लुप्तप्राय संस्कार परंपरा को पुनर्जीवित कर जन-जन को अवगत कराया ।
- **अवतारी चेतना** : जिन्होंने "धरती पर स्वर्ग के अवतरण और मनुष्य में देवत्व के जागरण" की अवतारी घोषणा को अपना जीवन लक्ष्य बनाया और चेतना का ऐसा प्रवाह चलाया कि करोड़ों व्यक्ति उस ओर चल पड़े ।

गायत्री परिवार जीवन जीने कि कला के, संस्कृति के आदर्श सिद्धांतों के आधार पर परिवार, समाज, राष्ट्र युग निर्माण करने वाले व्यक्तियों का संघ है। **वसुधैवकुटुम्बकम्** की मान्यता के आदर्श का अनुकरण करते हुये हमारी प्राचीन ऋषि परम्परा का विस्तार करने वाला समूह है गायत्री परिवार। एक संत, सुधारक, लेखक, दार्शनिक, आध्यात्मिक मार्गदर्शक और दूरदर्शी युगऋषि पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी द्वारा स्थापित यह मिशन युग के परिवर्तन के लिए एक जन आंदोलन के रूप में उभरा है।